ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 168-170
ISSN NO.-2347-2944
Vol.-9, No.-I, Issues-X YEAR- June -2018

श्रीमद् भगवद्गीता दर्शन का सामान्य दार्शनिक परिचय

डॉ0 राघवेन्द्र प्रताप मिश्र
प्रवक्ता– दर्शनशास्त्र विभाग, बुद्ध पी0जी0 कॉलेज, कुशीनगर (उ0प्र0) भारत

ॐ पूर्णमदः पूर्णमिदं पूर्णात्पूर्णमुदच्यते। पूर्णस्य पूर्णमादाय पूर्णमेवावशिष्यते।।
ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः।।

ॐ वह (परब्रह्म) पूर्ण है, यह (कार्यब्रह्म) भी पूर्ण है, क्योंकि पूर्ण से पूर्ण ही निकलता है, (प्रलयकाल) में पूर्ण (कार्यब्रह्म) का पूर्णत्व लेकर पूर्ण (परब्रह्म) ही शेष रहता है। ॐ शान्तिः ॐ शान्तिः।।[1] यजुर्वेद

ॐ असतो मॉं सद्गमय तमसो मॉं ज्योतिर्गमय मृत्योर्मामृतं गमयेति।।

असत् से मुझे सत् की ओर ले चलो, अंधेरे से मुझे प्रकाश की ओर ले चलो। (बृहदारव्यकोपनिषद्)[2]

निराकार ब्रह्म भक्तों के प्रेमवश उनके उद्धारार्ध साकार रूप से प्रकट होकर उन्हें दर्शन देते हैं। उनके साकार रूपों का वर्णन मनुष्य की बुद्धि के बाहर है, क्योंकि वे अनन्त है। भक्त जिस रूप में उन्हें देखना चाहता है वे उसी रूप में प्रत्यक्ष होकर उन्हें दर्शन देते हैं। भगवान का साकार रूप धारण करना भगवान के अधीन नहीं, प्रेमी भक्तों के अधीन है अर्जुन ने पहले विश्वरूप दर्शन की इच्छा प्रगट की, फिर चतुर्भुज की और तदन्तर द्विभुज की। भक्त भावन भगवान् कृष्ण ने अर्जुन को उसके इच्छानुसार तीनों रूपों से दर्शन दे दिया और अर्जुन को निराकर का भाव भी भलीभांति समझा दिया। इसी प्रकार जो भक्त परमात्मा के जिस स्वरूप की उपासना करता है, उसको उसी रूप में दर्शन हो सकते हैं।

गीता को भारतीय दर्शन की आत्मा कहा जाता है, भगवान कृष्ण ने गीता में जो उपदेश अर्जुन को दिया है वह देशकाल प्रत्येक परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति के लिए महत्वपूर्ण है।

गीता की सार्वभौमिकता के विषय में डॉ0 राधा कृष्णन् का कहना है कि गीता के संदेश का क्षेत्र सार्वभौम है। यह प्रचलित हिन्दू धर्म का दार्शनिक आधार है। इसका रचयिता गहरी संस्कृति वाला है वह समालोचक न होकर सर्वग्राही है। वह किसी धार्मिक आन्दोलन का नेता नहीं है, इसका उपदेश किसी सम्प्रदाय विशेष के लिए नहीं है। उसने अपना कोई सम्प्रदाय स्थापित नहीं किया किन्तु मनुष्य मात्र के लिए उसका निर्दिप्त मार्ग खुला है।[3]

आध्यात्मक, भौतिकता, धर्म, नीति और दर्शन की दृष्टी से गीता का भारत में ही नहीं बरन सम्पूर्ण विश्व में महत्वपूर्ण स्थान है। गीता में भगवान कृश्ण ने जो उपदेश दिये हैं उसका सार्वभौमिक महत्व है। गीता ने सम्पूर्ण मानव जाति को प्रभावित किया है। इसका प्रमाण यही है कि विश्व की अनेक भाषाओं में इसका अनुवाद किया गया है। गीता की सर्वथापकता और सार्वभौमिकता के संदर्भ में श्री अरविन्द का कथन अत्यन्त महत्वपूर्ण है– गीता में ऐसा विषय बहुत ही कम है जो केवल एक देशीय और सामयिक हो और जो है भी उसका आशय इतना उदार, गंभीर और व्यापक है कि उसे बिना प्रयास किसी प्रयास के, और इसकी शिक्षा का जरा भी ह्रास या अतिक्रमण किये बिना व्यापक रूप दिया जा सकता है। इतना ही नहीं बल्कि ऐसा व्यापक रूप देने से उसकी गहराई, उसके सत्य और उसकी शान्ति में वृद्धि होती है।'"[4]

भारतीय दर्शन में गीता दर्शन का सर्वाधिक महत्व एवं लोकप्रियता इसलिए है कि इसमें मानव जीवन से सम्बन्धित जटिल से जटिल समस्याओं का विवेचन और शाश्वत समाधान का प्रस्तुतीकरण। गीता ने जीवन की ऐसी समस्याओं को प्रस्तुत किया है जिनका धर्म, व्यक्ति, जाति या देश–काल परिस्थिति विशेश से सम्बन्ध नहीं है। इस अर्थ में गीता 'धर्म निरपेक्षता' के कारण ही सार्वभौमिक और सार्वलौकिक सिद्ध हुई है। गीता मात्र हिन्दू धर्म का ही महान ग्रन्थ नहीं है, अपितु सम्पूर्ण मानवता का ग्रन्थ है। गीता दर्शन का प्रयोजन मानव आचरण से सम्बन्धित समस्याओं का निराकरण और जीवन को प्रेरणा देना है।

गीता दर्शन वह गुरु है जो मानव जीवन की विकट परिस्थितियों में क्या करें और क्या न करें, उसका मार्गदर्शन करती हैं। सम्पूर्ण मानवता के लिए नैतिक दृष्टि से गीता का निश्काम कर्म का सिद्धान्त आत्याधिक महत्वपूर्ण है। भारतीय धर्मशास्त्रों में गीता दर्शन का महत्व सर्वोपरि इसलिए भी है कि इसमें सभी शास्त्रों का समाहार है। गीता 'सर्वशास्त्रमयी' कही गई है, क्योंकि गीता के वेदों तथा उपनिशदों में वर्णित दार्शनिक एवं नैतिक–सिद्धान्त का मूल तत्व समाहित है। गीता की विशेषता उसके समन्वयकारी होने में है। सगुण निर्गुण, आदर्श–यथार्थ, सन्यास–भोग, ज्ञान–भक्ति–कर्म, त्याग आदि का पूरी समन्वय इसमें प्राप्त होता है। गीता ने व्यक्ति और समाज का पूर्ण समन्वय करके नैतिक जीवन के लिए अपना अकाट्य स्थान निर्धारित कर लिया है। इसलिए इसकी प्रासंगिकता पर प्रश्नचिन्ह नहीं लगाया जा सकता। गीता सदियों बाद भी निरन्तर

अनुरूपी लेखक

एवं चिरन्तर रूप से प्रासंगिक है। गीता दर्शन का मानव जीवन पर इतना व्यापक प्रभाव था कि देश–विदेश के अनेक सन्तों, मनिशियों, विचारकों ने इसकी टीका और व्याख्या अपने मनोनुकूल की है। व्याख्याकारों में मतभेद होते हुए भी इसके मूल मन्तकों को किसी ने नष्ट नहीं किया है। ज्ञानी, साधक विद्वान आदि सभी ने इसकी व्याख्या में जितनी रूचि ली है उतनी रूचि किसी अन्य धर्म–ग्रन्थ में नहीं ली गई है। यह भी इसकी लोकप्रियता का एक प्रमाण है। प्राचीन व्याख्याकारों में शंकराचार्य, रामानुजाचार्य निम्बार्क आदि है तो आधुनिक कारकागरों में श्री अरविन्द, महात्मा गाँधी, लोकमान्य तिलक और विनोबा भावें, डॉ0 राधा कृष्णन् आदि के नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है। आचार्य शंकर ने मानव जीवन के परम लक्ष्य हेतु, मोक्ष हेतु ज्ञान को सर्वोपरि माना है, रामानुज और निम्बार्क ने गीता की भक्तिपरक व्याख्या की है और भक्ति को एकमात्र लक्ष्य का साधन स्वीकार किया है। आधुनिक साधकों, विचारकों तथा सामाजिक चिंतकों ने इसकी समन्वयात्मक व्याख्या करते हुए निश्काम कर्म को ही श्रेष्ठ माना है। आज तक के व्याख्याकारों, टीकाकारों ने गीता दर्शन के विभिन्न पक्षों को महत्व देते हुए इतना तो सिद्ध कर दिया कि यह महान ग्रन्थ मानव जीवन के लिए आत्याधिक महत्वपूर्ण है। ''गीता की उपयोगिता और व्याहारिकता को देखते हुए गाँधी जी पुनः कहते हैं– मैं तो चाहता हूँ कि गीता न केवल राष्ट्रीयशालाओं में ही बल्कि प्रत्येक शिक्षण संस्थानों में पढ़ाई जाए।''[5]

गीता विश्वकल्याण, मानवता के कल्याण हेतु सूर्य के समान है। गीता का दर्शन मनुष्यों को सन्मार्ग पर चलने हेतु प्रेरित करती है। यदि मनुष्य को स्वयं को जानना है तो गीता को जानना, पढ़ना एवं जीवन में गुनना पड़ेगा। वर्तमान समय में चकाचौंध, भौतिकता, अज्ञानता, अवसाद से बच कर स्वयं को पहचानना एवं बौद्धिक दृष्टि से स्वयं का विकास करने के लिए गीता दर्शन का अध्ययन प्रत्येक व्यक्ति के लिए आवश्यक है।

''गीता के इस सामान्य परिचय के आधार पर हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि गीता एक सार्वभौमिक धर्म ग्रन्थ है। यह नीति और धर्म का समागम है। इसकी व्यवहारिकता व्यवहारिक आचार ग्रन्थ होने के कारण है। अन्य धर्म ग्रन्थों की भांति इसका भी लक्ष्य व्यक्ति की पूर्णता है। इस पूर्णता को प्राप्त करने के लिए निश्काम कर्म मार्ग ही एकमात्र उपाय है।''[6] भारतीय दर्शन में ईश्वर विशयक मत अनेक प्रकार से व्यक्त किये गये हैं। भगवान श्री कृष्ण ने गीता में स्वयं ईश्वर को सर्वोच्च सत्ता के रूप में स्वीकार करते हुए बताया है कि ईश्वर अनन्त है, शाश्वत और कुटस्थ है। ईश्वर आनन्द का स्रोत है। ईश्वर सर्वव्यापक है और सर्वशक्तिमान है। ईश्वर अर्न्तयामी तथा बहिर्या भी दोनों है। अर्थात् ईश्वर अन्तर्यामी रूप में जगत में समाया हुआ है। जगत में जीव उसी का सनातन अंग है और उसी से वह उत्पन्न हुआ है। इस सम्पूर्ण जगत का आधार ईश्वर ही है। ईश्वर ही जगत को धारण किये हुए है।

गीता का ईश्वर परम धाम, परम निधान, तथा परम तत्व कहा गया है, ''परन्तु फिर भी ईश्वर अपने पुरुषोत्तम रूप में उसमें (ब्रह्म से भिन्न न होते हुए भी) इस अर्थ में उत्तम है कि वह महतत्व होते हुए भी पुरुषोत्तम केवल अंश ही है। विश्व, त्रिगुण, पुरुष (जीवभूत), बुद्धि अहंकार आदि का समूह एवं ब्रह्म, यह सब ईश्वर के अंश अथवा आभाया है जिनके कार्य एवं उनके मानसिक सम्बन्ध भिन्न–भिन्न हैं, परन्तु ईश्वर अपने पुरुषोत्तम रूप में उनसे परे हैं एवं धारण करता है।''[7]

गीता में ईश्वर के व्यापक रूप पर तथा जगत के आधार के रूप पर बार–बार प्रकाश डाला गया है। ईश्वर (श्री कृष्ण) कहते हैं – हे अर्जुन! मुझसे भिन्न दूसरा कोई भी परम–कारण नहीं है। यह सम्पूर्ण जगत सूत्र में सूत्र के मणियों के सदृश मुझमें गुथा हुआ है। हे अर्जुन! जल में रस मैं हूँ, वैसे ही सूर्य और चन्द्रमा में प्रकाश मैं ही हूँ। समस्त वेदों में ओंकार मैं ही हूँ। अर्थात् इस ओंकार रूप मुझ परमात्मा में सब वेद पिरोए हुए हैं। आकाश में इसका सारभूत शब्द हूँ, अर्थात् इस शब्द रूप मुझ ईश्वर में आकाश पिरोया हुआ है। पुरुशों में मैं पुरुश हूँ, अर्थात् पुरुषों में जो पुरुशत्व है, जिसमें उनको पुरुष समझा जाता है, वह मैं हूँ, पौरुष रूप मुझ ईश्वर में पुरुष पिरोये हुए हैं।''[8]

गीता में ईश्वर को जगत की क्रियाओं का अधिष्ठाता कहा गया है। जैसे–ईश्वर अपने तेज से सम्पूर्ण जगत तथा भूतों को धारण करता है। रसात्मक होकर सब औषधियों का वही पोषण करता है। वही अग्नि होकर प्राणियों के भीतर रहता है, और चार प्रकार के अन्न को पचाता है। जहाँ भी तेज है, जैसे–सूर्य में, चन्द्रमा में और अग्नि ये वह ईश्वर ही है। ईश्वर ही सभी के ह्रदय में निवास करता है। गीता के अनुसार ईश्वर जगत में भी व्याप्त है और जगत से परे भी है। गीता में ईश्वर को परब्रह्म कहा गया है, वह अजन्मा है, शाश्वत् है न सत् है न असत्त् है। वह विश्व में प्राप्त है और परे भी है। वह जगत का पालक है। वह सगुण रूप में भक्तों का भगवान है, ईश्वर पुरुषोत्तम है। ईश्वर निर्गुण होकर भी भक्तों का योग–क्षेम वहन करने वाला है। गीता ने सगुण ईश्वर की उपासना को सहज तथा श्रेष्ठतर माना है।''[9] सगुण ईश्वर की शरण में भक्त जाता है। सब कर्मो को ईश्वरार्पण करके ध्यान करने वाला भक्त ईश्वर को भी पाता है और संसार सागर से पार हो जाता है। गीता

वह ग्रन्थ है जिसको जितनी बार अध्ययन किया जाए वह उतना ही मनुष्य मन एवं कर्म को मजबूत करती है। ज्ञान की वृद्धि होती हैं। गीता दर्षन के अनेक भाग है जिनका मानव जीवन मूल्यों से सम्बन्ध है। गीता का केन्द्र बिन्दु कर्म मार्ग ही है। गीता में अर्जुन के माध्यम से मानव मात्र के लिए निष्काम कर्म सम्पादन का उपदेश दिया गया है।

जीवन की चाहे कितनी विशम परिस्थिति हो मनुष्य को उसमें अपने कर्त्तव्य का पालन करना ही है। गीता में अर्जुन को श्री कृष्ण ने बार–बार यही समझाया है कि बिना कर्म के परिणाम पर विचार किए अर्थात् परिणाम की आकांक्षा का त्याग करके कर्त्तव्य–पालन की दृष्टि से सभी कर्म करना चाहिए। गीता में इसी सिद्धान्त को 'निश्काम–कर्मयोग'' की संज्ञा दी गयी है। निष्काम कर्म के अर्थ को गीता के दूसरे अध्याय के इस श्लोक के आधार पर समझा जा सकता है, जिसमें श्री कृष्ण ने अर्जुन से कहा है–

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोड़स्त्वकर्मणि।।

अर्थात् तुम्हारा कर्म करने मात्र में ही अधिकार है, उसके फल में कभी नहीं। अतः तुम कर्मो के फल की वासना वाला भी मत होवे। इतना ही नहीं, तुम्हारी कर्म न करने में भी प्रीति न होवे। सारांश में कर्म तो मनुष्य को किसी भी दशा में करना ही है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. यजुर्वेद।
2. वृहदारण्यकोपरिशद्।
3. भारतीय दर्शन–भाग–1, पृ0 480 प्रो0 राधाकृष्णन्।
4. गीता प्रबन्ध–पृ0 4.
5. गीता माता–पृ0 374.
6. भारतीय दर्शन–ह्रदय नारायण मिश्र पृ0 71.
7. डॉ0 एस0दास गुप्ता– भारतीय दर्शन का इतिहास भाग–2, पृ0 448.
8. गीता शंकर भाष्य –77–8.
9. भारतीय दर्शन–डॉ0 दासगुप्त पृ0 452.

*****